SS-3

UGC Approved Journal No - 49297
ISSN 2231 - 4113

Śodha Pravāha

A Multidisciplinary Peer Reviewed Refereed Research Journal

Vol. 8, Issue II February 2018

Chief Editor
Dr. S. K. Tiwari
Editor
Dr. S. B. Poddar

- **हिमाचल की हिन्दी कहानी में बहू-बेटों द्वारा मां-बाप की उपेक्षा का यथार्थ चित्रण** 487-489
  डॉ. निशा देवी, सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीगा (रोहडू) जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश
- **अब्दुल बिस्मिल्लाह के उपन्यासों में समकालीन परिदृश्य** 490-492
  डॉ. कल्याण कुमार झा, एसोसिएट प्रोफेसर, विश्वविद्यालय हिन्दी विभाग, बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर
- **यशपाल की कहानियों में प्रगतिवाद** 493-496
  डॉ. साक्षी शालिनी, एम. ए., पीएच.डी. (हिन्दी) बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर
- **मध्यकालीन शिक्षा का विकास** 497-499
  डॉ. मनीषा रंजन, पी.एच-डी., इतिहास विभाग, ललित नारायण मिथिला विश्विद्यालय, दरभंगा
- **भारतीय पुनर्जागरण (1784-1856) : उत्पत्ति, प्रभाव तथा पर-संस्कृति के परिप्रेक्ष्य में एक विश्लेषणात्मक अध्ययन** 500-502
  डॉ. महेन्द्र चौधरी, एम.ए., पीएच.डी. (इतिहास), बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर
- **मोहनदास करमचंद गाँधी का दलित दृष्टिकोण : एक ऐतिहासिक पुनरावलोकन** 503-505
  डॉ. राजन कुमार, एम.ए., पीएच.डी. (इतिहास), बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर
- **गाँवों से शहरों की ओर पलायन : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (मुजफ्फरपुर जिला के संदर्भ में)** 506-509
  गीतांजलि, शोध छात्रा (समाजशास्त्र), बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर
- **कृषि क्षेत्र में तकनीकी विकास का प्रभाव : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (दरभंगा जिला के संदर्भ में)** 510-514
  संजीव कुमार, शोध छात्र (समाजशास्त्र), ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा
- **प्राचीन भारत में समाजवाद का स्वरूप - अशोक के अभिलेखों के संदर्भ में** 515-516
  डॉ राजेश कुमार रौशन, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया
- **महात्मा गांधी के चिन्तन में ईश्वर तत्व : एक अध्ययन** 517-521
  डॉ. मनोज कुमार सिंह, असिस्टेंट प्रोफेसर, वसन्त कन्या महाविद्यालय, कमच्छा, वाराणसी
- **चरित्र-सृष्टि एवं समस्याओं की दृष्टि से धर्मवीर भारती के उपन्यास** 522-525
  शशि भूषण, शोध-प्रज्ञ (हिन्दी), यू.जी.सी. (नेट उत्तीर्ण), ल.ना.मि.वि.वि. कामेश्वरनगर, दरभंगा।
- **रीतिकाव्य में नारी : ऐन्द्रिक आकर्षण बनाम स्वच्छन्दता का प्रश्न?** 526-528
  निहारिका सिंह, नेट, जे.आर.एफ., शोध छात्रा, हिन्दी विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
- **जनपद सुलतानपुर में भूमि उपयोग दक्षता प्रतिरूप का भौगोलिक अध्ययन** 529-532
  रेनू यादव, शोध छात्रा, भूगोल विभाग, नेहरू ग्राम भारती मानित विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
- **मुजफ्फरपुर की महिलाओं का स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता : एक अध्ययन** 533-536
  डॉ. श्वेता कान्ता, पीएच.डी. (गृहविज्ञान), बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर

यशपाल की कहानियों में प्रगतिवाद

डॉ. साक्षी शालिनी *

हिन्दी साहित्य जगत में प्रगतिवाद का आरंभ सन् 1936 ई. से माना जाता है। प्रगतिवाद के आदि प्रवर्तक कार्ल मार्क्स हैं, राजनीति के क्षेत्र में जो मार्क्सवाद है साहित्य में वही प्रगतिवाद है। प्रगतिवाद मार्क्सवादी जीवन दर्शन की साहित्यिक अभिव्यक्ति है। 1930 ई. के बाद नवीन सामाजिक चेतना से युक्त हिंदी जगत में जिस साहित्यिक–धारा का जन्म हुआ, उसे 1936 ई. में प्रगतिवाद की संज्ञा दी गई। 1936 ई. में प्रगतिशील लेखक संघ का पहला सम्मेलन हुआ जिसकी अध्यक्षता प्रेमचंद ने की। इसके बाद साहित्य की विभिन्न विधाओं में मार्क्सवादी विचारधारा का प्रभाव दिखाई देने लगा। समाज दो वर्गों में विभाजित था– एक वर्ग शोषक का और दूसरा शोषित का। शोषक वर्ग हमेशा संख्या में कम होता है लेकिन उत्पादन के साधनों पर नियंत्रण होने के कारण सत्ता पर भी नियंत्रण रखता है। मार्क्सवाद वर्ग संघर्ष को मिटाना चाहता है, वह समाज का करुण क्रन्दन सुनता है और शोषितों के प्रति होने वाले अन्याय को दूर करने की ठानता है। शोषक और शोषित पूँजीपति और श्रमिक दोनों वर्ग दो परस्पर विरोधी शक्ति के रूप में आते हैं। इसलिए प्रगतिवाद का विश्वास है कि जब तक यह वर्ग–व्यवस्था समाप्त नहीं होगी, तब तक समाज में शांति नहीं होगी। दिनकर कुरुक्षेत्र में स्पष्ट लिखते हैं–

"जब तक मनुज–मनुज का यह सुख–भाग नहीं सम होगा।
शमिन न होगा कोलाहल, संघर्ष नहीं कम होगा।।"

हिंदी कहानी हिंदी साहित्य की प्रमुख कथात्मक विधा है। पिछले एक सदी में हिंदी कहानी ने आदर्शवाद, यथार्थवाद, प्रगतिवाद, मनोविश्लेषणवाद, ऑचलिकता आदि के दौर से गुजरते हुए सुदीर्घ यात्रा में अनेक उपलब्धियाँ हासिल की हैं। प्रेमचंदयुगीन कहानीकार यशपाल ने भी समाज के यथार्थ घटनाओं को अपने कहानियों के माध्यम से पाठक तक पहुँचाया है। यशपाल प्रगतिवादी धारा के प्रतिनिधि कहानीकार हैं। इनका पहला कहानी संग्रह 'पिंजरे की उड़ान' (1939 ई.) है जिसमें सन् 1934 ई. से 938 ई. तक के मध्य जेल में लिखी गई कहानियाँ संकलित हैं।

यशपाल ने अपनी कहानियों में रूढ़ियों एवं जड़ें जमाई हुई मान्यताओं का खंडन किया है। इसके लिए कहानीकार ने व्यंग्य और कल्पना का सहारा लिया है। समाज में हो रही कुरीतियों, जीवन की विडम्बनाओं एवं समाज की विषमताओं को दूर करने के लिए अपने कथ्य में व्यंग्य को विषय बनाया है। उनका मानना है कि समाज तथा सत्ता के खोखलेपन से पर्दा उठाने के लिए व्यंग्य ही सशक्त साधन है। उनकी कहानी संग्रह 'भस्मावृत्त चिनगारी' में संकलित 'महादान' शीर्षक कहानी में स्पष्ट देखी जा सकती है। 'महादान' कहानी में महादानी सेठ परसादीलाल टल्लीमल की कोठी चावलों की बोरियों से भरी पड़ी है और जनता भूखे पटपटा कर मर रही है। जिस अन्न की एक मुट्ठी के लिए बच्चों का समूह त्राहि–त्राहि कर रहा है, वही सेठ कोठी से भरा हुआ चावल रख कर तेजी की प्रतीक्षा कर रहे थे। कोठों में विश्राम कर लेने से चावल के भाव में तेजी आ जाता था। क्षुधा पीड़ितों को देखकर सेठजी का हृदय पसीज उठता है तो धर्मादय से कंगालों के लिए दो बोरी चना रोज बँटवाने की अनुमति देते हैं। ऐसे पूँजीपतियों को भूख से मरे लोगों की चिंता नहीं है किन्तु उनके शरीर को मृत्यु के मिट्टी जरुर मिलनी चाहिए। धर्म के नाम पर ये मुनाफा जीवित प्राणियों की रक्षा करने में असमर्थ है किन्तु मृतकों की मिट्टी ठिकाने लगाने का ढोंग कर अखबार की सुर्खियों में छाये रहते हैं। जिसे कहानीकार ने इन पंक्तियों में व्यक्त किया है– "मुनीमजी" ऑखों में करुणा के ऑसू भर सेठजी ने हुक्म दिया, "जो भाव लकड़ी मिले बीस हजार की खरीद कर गिरवा दो। किसी बेचारी की मिट्टी की दुर्गति न होने पावे।"[1]

---

* एम. ए., पीएच.डी. (हिन्दी) बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर

यशपाल की कहानी 'मक्खी या मकड़ी' कहानी संग्रह 'खच्चर और आदमी' में संकलित है इसमें अर्थव्यवस्था का दूसरा रूप घुसखोरी की धांधली व्यवस्था का चित्रण खींचा गया है। रिश्वत के रूप में मुनाफे कमाने वाले व्यक्ति समाज के व्यवस्था को खराब कर रहे हैं। धांधली के मकड़े समाज में शासन व्यवस्था पर अपना जाल फैलाते जा रहे हैं। इस व्यवस्था में भले लोग पड़कर असहाय मक्खियों की तरह छटपटाते दम तोड़ते रहते हैं किन्तु मक्खियॉ भी स्वयं इस धांधली व्यवस्था को और भी बढ़ावा देने लगती हैं। नौकर, ओवरसियर, वकील और दारोगा के इस रिश्वत जाल को यशपाल ने उजागर किया है। ओवरसियर को इक्कीस हजार की रकम उनके ही नौकर द्वारा चुरा लिया जाता है। इस नौकर को बचाने के लिए गरीब किसान वकील साहब को घूस देता है। वहीं वकील केस को उल्टा कर देता है जिसे अपनी रिपोर्ट वापस लेने के लिए ओवरसियर दारोगा को पॉच सौ रुपये की रकम भेंट करता है। इस चोर बाज़ारी का रुपया जो रिश्वत के जरिय लोगों की जेब भर रहा है समाज की इस शासन प्रणाली पर प्रश्न चिह्न खड़ा कर रहा है। इस घुसखोरी बाजार को कहानीकार के इन पंक्तियों में देखा जा सकता है– 'तुम्हें इस जमाने की धांधली का कुछ अंदाजा हुआ, कैसी–कैसी रकमें काटते हैं यह लोग–एंड ऑल दिस इस पब्लिक मनी। इस धांधली से नुकसान तो पब्लिक का होता है। इनलोगों के लिए चार सौ, पॉच सौ क्या है?''[2]

'गुलाम की वीरता' कहानी यशपाल के 'भस्मावृत चिनगारी' संग्रह से है जिसमें कहानीकार ने शोषक–शोषित संबंध को उजागर किया है। जेल में जीवन व्यतीत करते समय जेल जीवन की पृष्ठभूमि में कहानीकार शोषक व्यवस्था की शोषित–पीड़ित जन की स्थिति का दर्शन करना है। यह कहानी साहसी मुलुआ की है, जो गुलाम है उसकी वीरता का कोई मूल्य नहीं, क्योंकि वीरता का प्रदर्शन तो केवल सामंती व्यवस्था में राजा–महाराजा या उच्चवंशजों को ही विरासत में मिला है। उन दिनों लेखक राजनैतिक कैदी के रूप में अपना जीवन जेल में बीता रहे थे। उसी क्रम में मुलुआ अपने वीरता की कहानी लेखक को सुनाता है। लेखक को जेल में लालटेन की सुविधा मिली थी। जब लेखक अखबार पर प्रकाशित एक मरे हुए बाघ की तस्वीर को देख रहे थे तभी मुलुआ उनके करीब आकर बैठ जाता है और उस तस्वीर को देखता हुए कहता है यह किसी बड़े सरकार के द्वारा शिकार में मारा गया बाघ है, इसलिए इसका इतना प्रचार प्रसार है। यह कह कर उसने अपने द्वारा मारे गये बाघ की कहानी लेखक को सुनाता है। मुलुआ बुन्देलखण्ड के रियायत रो तालुक रखता था, वह अंग्रेजी सरकार के इलाके में डाका मारने के जुर्म में, चौदह वर्ष का सजा काट रहा था। उसके वीरता की कहानी सुनकर लेखक कहता है कि मूर्खता हुई, नाहर मारा था तो दुनिया को बताना था, नाम मिल जाता। तब मुलुआ अपने शोषित, दबे, कुचले होने की दुहाई देता है और कहता है कि रियाया लोग कहीं नाहर मार सकते हैं! वह तो सरकार का राजा का शिकार है। वे बन के राजा, वे जग के राजा। इस कहानी में लेखक ने शोषक–शोषितों का संबंध दिखाकर शोषित– पीड़ित, गुलाम वर्ग की दयनीयता का जीवंत चित्र खींचा है। पूँजीवादी एवं सामंतवादी व्यवस्था का भीषण परिणाम है कि इसमें जनसामान्य मानव हमेशा से ही प्रताड़ित होते आ रहा है। शोषितों में कोई साहसी, चतुर बुद्धि वाला व्यक्ति हो तो उसे इन उच्च वर्गो द्वारा हमेशा दबाया जाता रहा है। शोषित वर्ग भी इस जुल्म को अपना धर्म समझ कर अन्याय और अत्याचारों को सहने के अभ्यस्त होते रहे हैं। इस सामाजिक व्यवस्था पर कहानीकार ने कुठराघात किया है, जो इन पंक्तियों में देखा जा सकता है– "रियाया लोग कहीं नाहर मार सकते हैं। वह तो सरकार राजा का शिकार है। वे बन के राजा, वे जग के राजा।''[3]

'वैष्णवी' कहानी 'कहानी 'खच्चर और आदमी' कहानी संग्रह में संकलित है जिसमें कहानीकार ने कठोर सत्य की पृष्ठभूमि को यथार्थ की धरातल पर उतारने का सफल प्रयास किया है। 'वैष्णवी' कहानी में यशपाल ने बाल–विवाह एवं विधवा–विवाह की समस्या की विडंबनाओं को उठाया है। हिंदू समाज में वैष्णवी जैसी स्त्री को अभिशाप समझा जाता है क्योंकि पति की मृत्यु को समाज में अपसगुन समझकर उसे कलंकित किया जाता रहा है। उसे अपने पति को खा जाने वाली डायन की भी उपाधि दे दी जाती है। पहले वह अपने ही परिवार में मॉ–बाप से अपमानित होकर समाज के लिए भी कलंकित हो जाती है। दूसरी ओर विधवा कह कर समाज के बुरी दृष्टि रखने वाले पुरुष वासना की

भी चाह उससे रखते हैं। वैष्णवी भी इसी सामाजिक कुंठा की शिकार बच्ची है। पाँच वर्ष की आयु में वैष्णवी का विवाह होता है और साढ़े छः वर्ष की आयु में विधवा बन जाती है। पुराने संस्कारों को स्वीकार करने वाली वैष्णवी को उसके माता–पिता भी हीन दृष्टि से देखते हैं। द्रौपदी (वैष्णवी) जवानों में कलह का, स्त्रियों में ईर्ष्या का, प्रौढ़ों में चिंता का और माता–पिता के लिए भयंकर कष्ट का कारण बन जाती है। समाज की दकियानुसी सोच से तंग आकर द्रौपदी वैष्णवी बन कर घर छोड़ने पर मजबुर हो जाती है। इस कहानी में कहानीकार ने समाज की रूढ़ियाँ जो नारी को जीतेजी साँस लेना दुर्लभ कर देता है पर प्रहार किया है। यही कारण है इस रूढ़ियों से तंग होकर वह भाग जाती है। समाज के इस रूढ़िवादी परंपरा को कहानीकार ने इन पंक्तियों में व्यक्त किया है– "भाग गयी, भागकर कहाँ जायेगी?" उन्होंने आकाश की ओर संकेत किया, "वह देखने वाला है उससे भाग कर कहाँ जायेगी? चुड़ैल ने अपने पिछले जन्म के पापों से कंगाल, भिखमंगे के घर जन्म पाया, सुधि सँभालने से पहले रंडापा पाया, इस पर भी चुड़ैल कुछ नहीं समझी। अब यह पाप कर रही है तो इसका भी फल पायेगी। किसी बेसवा के घर जन्म पायेगी। हरामजादी बेसवा वैष्णवी बनती थी, अच्छा हुआ हमारे मुहल्ले से कलंक गया।"[4]

'फूलों का कुर्ता' कहानी संग्रह में संकलित 'भवानी माता की जय' कहानी पूँजीपतियों के भ्रष्टाचार एवं क्रूर व्यवहार को उजागर करती है। कहानी का प्रमुख पात्र भूरे सिंह है। उसकी पत्नी भवानी है जो मोरियल मिल के प्रमुख जमादार ठाकुर मितान सिंह के छोटे भाई की इकलौती संतान थी। बीस वर्ष पूर्व ठाकुर मितान सिंह पर जब कई संकट आ पड़े थे तो उन्होंने भवानी माता को याद किया था। देवी की कृपा से वरदान रूप में प्राप्त कन्या का नाम भी उसने भवानी ही रख दिया। मितान सिंह ने बड़े तालाश के बाद भूरे सिंह को अपनी कन्या के वर के रूप में चुना और उससे उसका विवाह कर दिया। भूरे को दामाद बना लेने के बाद मितान सिंह ने उसे मिल की दरबानी में भर्ती करा लिया। मिल के मालिक बड़े जमींदार थे वे मिल के मजदूरों पर कम ध्यान देते थे। मजदूरों के प्रति क्रूर व्यवहार था जिस के कारण मजदूर असंतुष्ट होकर रोज आये दिन मिल में हड़ताल की धमकी देते थे। मजदूर अपने अधिकार के लिए लड़ते थे। एक दिन मिल के मालिक ने डेढ़ सौ आदमियों को हटाने का नोटिस दिया जिससे मजदूरों में हड़कंप मच गया, भूरे सिंह मजदूरों का पक्षधर था। वह आन्दोलन का नेतृत्व भी कर रहा था, जिसके कारण भूरे सिंह को नौकरी से हटा दिया गया। नौकरी छोड़ कर जाते समय पत्नी भी उसके साथ जाने लगी तो मितान सिंह ने उसे कुल की इज्जत की रक्षा के ख्याल से जाने से रोक लिया। भूरे और उसके मजदूर साथियों ने मितान सिंह पर भवानी के ज़बरदस्ती रोकने का आरोप लगाया। देखते ही देखते आन्दोलन उग्र रूप धारण कर लेता है। पूँजीपतियों के विरुद्ध मजदूरों के संगठित रूप को देखकर उन पर पुलिस गोली चलाने का हुक्म देती है। भवानी अपने पति की रक्षा हेतु बाहर निकलती है। गोली भवानी को ही लग जाती है, जिससे उसकी मौत हो जाती है। इन्कलाब जिन्दाबाद के नारे लगाते हुए मजदूर भवानी की शव की मॉग करते हैं जिसे पुलिस उनके हवाले कर देती है। इस कहानी में कहानीकार ने शोषक वर्ग के विरुद्ध सर्वहारा वर्ग को संगठित कर विद्रोह करने और अपने अधिकारों की मॉग के लिए सचेत करने की प्रेरणा को रेखांकित किया है। कहानीकार ने अपनी प्रगतिवादी विचारों की गोली चलाकर पूँजीपतियों को गिराने की बलजोर कोशिश की है, जो मितान सिंह के इन पंक्तियों में दिखाई देता है– "मालिकों के कुत्तों का नाश हो, पूँजीपतियों के टुकड़ाखोरों का नाश हो।"[5]

यशपाल ने अपनी हर कहानी में शोषण को ही केन्द्र में रखा है चाहे वह नारी हो, दलित हो या कोई निम्नवर्गीय गरीब हो, हर कोई किसी न किसी के हाथों शोषित है। 'न्याय और दंड' कहानी जो 'ओ भैरवी!' संग्रह में संकलित है कहानीकार की प्रगतिशील दृष्टिकोण की ऊपज है। इस कहानी में जन्मजात श्रेणी विभाजन की सामाजिक व्यवस्था के प्रति प्रतिक्रिया है। धक्क जो बॉस कटवा छिलवा कर पिटारियॉ टोकरियॉ आदि बेचने वाला अकुलीन आदमी है। नीच जाति का होने के कारण उच्च वर्ग के लोगों द्वारा उसका खानदान भी दबा कुचला है। जो सुविधा कुलीनों को प्राप्त हो उस सुविधा का उपयोग निम्न जाति के लोग नहीं कर सकते। उन दिनों लेखक मैट्रिक की परीक्षा देकर असहयोग

आन्दोलन में भाग लेने वाले थे। एक दिन खाली समय में गुल्ली बनाने के लिए औज़ार माँगने धक्कू के घर गये, लेकिन वह मेले में टोकरियाँ बेचने निकला था। धक्कू से लेखक का परिचय बचपन से ही था। धक्कू के साथ लेखक गुल्ली–डंडा भी खेलते थे। घर में धक्कू से कोई आवश्यक कार्य ही कराया जाता था क्योंकि वह जाति से डोम था। मेले में अच्छी बिक्री होने से धक्कू ने एक काँसे की थाली खरीदी थी, जो डूमने के किसी भी व्यक्ति के घर न थी और न ही किसी ने खरीद थी। यह कार्य करने वाला पहला व्यक्ति धक्कू ही था। समाज में काँसे की थाली में खाने का प्रचलन उच्च कुल में था। उस गाँव के मुख्य ठाकुर ब्राह्मण और अन्य कुलीन खानदान के लोग डूमनों के काँसे की थाली खरीद लाने के अनाचार और अधर्म पर अत्यंत क्रूद्ध हुए। यहाँ तक की उसे मार डालने की भी धमकी दे डाली। इन कुलीन लोगों ने धक्कू की झोपड़ी जला डाली और उसकी काँसे की थाली भी तोड़ डाली। इतना ही नहीं उसके परिवार को भी अपमानित और प्रताड़ित किया गया। समाज की इस व्यवस्था पर कहानीकार ने अपनी प्रगतिशील लेखनी दौड़ाई है। धक्कू जैसे लोग समाज की इस व्यवस्था के शिकार है जिन्हें कुलीन लोग गाली देकर उनकी औकात बताते हैं, जो इस पंक्ति में स्पष्ट दिखाई देता है– "सालों के पेट में अन्न बहुत पड़ने लगा है। तुम्हीं लोगों की किरपा है, जहाँ आध सेर देते थे, अब सेर दे डालते हो। हमें भी देना पड़ता है क्या करें।..... उन्हें ब्राह्मण–ठाकुर नीच दीख रहे हैं, अपने को ऊँचा समझ रहे हैं। कल तुम्हारे आँगन में आकर पीढ़े–खाट पर भी बैठेगा तो क्या कहोगे?"

निष्कर्ष : यशपाल ने अपनी कहानियों में विचारों की प्रगतिशील लेखनी ऐसी दौड़ाई है कि समाज के अनाचारों, अत्याचारों, शोषणों और पूँजीवादी व्यवस्थाओं के विरुद्ध यथार्थ चित्रण जीवंत हो उठे हैं। यशपाल ने इन सत्ताधारियों के कुशासन का और भ्रष्टाचारों को व्यंग्यात्मक शैली में बलजोर विरोध किया है। मार्क्सवादी चेतना से अनुप्राणित यशपाल की कहानियाँ सामाजिक विसंगतियों से मुक्ति पाने के लिए परंपरा और रूढ़ियों को तोड़ती हैं और समाज में समानता स्थापित करने की निरंतर कोशिश जारी रखती है। यही कारण है कि उनकी लगभग सभी कहानियों में प्रचलित वर्ण–व्यवस्था, भेद–भाव आदि विकृतियों के विरुद्ध आक्रोश मुखरित हुआ है। अतः कह सकते हैं कि यशपाल ने अपनी पूरी ईमानदारी से मध्यवर्गीय जीवन का एवं सामाजिक यथार्थ का कटु चित्र खींचा है, जो किसी को भी तिलमिला देने वाला है।

सन्दर्भ :

1. यशपाल रचनावली, भाग–1, संपादक–यशपाल, लोकभारती प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2007, पृ 20.
2. यशपाल रचनावली, भाग–1, संपादक–यशपाल, लोकभारती प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2007, पृ. 20
3. यशपाल रचनावली, भाग–1, पृ. 18.
4. यशपाल रचनावली, भाग–10, पृ. 267.
5. यशपाल रचनावली, भाग–1, पृ. 115.
6. यशपाल रचनावली, भाग–10, पृ. 74–75.

***